जानकी अम्मल (1897-1984)

एक समर्पित वनस्पति वैज्ञानिक

ई.के. जानकी अम्मल

सी.वी. सुब्रमण्यन

ई.के. जानकी अम्मल प्रख्यात वनस्पति वैज्ञानिक और पादप कोशिका विशेषज्ञ थीं। अनुवांशिकी, जैव विकास, पादप भूगोल और जनजातीय वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में इनका योगदान अमूल्य है। बीसवीं सदी की शुरुआत में एक महिला के लिए शोध में कैरीयर बनाना अच्छा खासा चुनौती भरा काम था। यह संक्षिप्त जीवनी उनकी ज़िंदगी और कार्यों का लेखा-जोखा पेश करती है ...।

जानकी अम्मल का जन्म 4 नवंबर 1897 को केरल के तेल्लीचेरी कस्बे में एक सुसंस्कृत मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। उनके पिता तत्कालीन मद्रास प्रेसीडेंसी में उप न्यायाधीश थे। अम्मल का परिवार काफी बड़ा था। उनके छह भाई और पांच बहनें थीं। तेल्लीचेरी में स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने मद्रास के क्वीन मेरीज़ कॉलेज से स्नातक डिग्री प्राप्त की। वर्ष 1921 में मद्रास के ही प्रेसीडेंसी कॉलेज से उन्होंने वनस्पति शास्त्र में ऑनर्स डिग्री हासिल की। उसके बाद अम्मल ने मद्रास के वीमेंस क्रिश्चियन कॉलेज (डब्ल्यूसीसी) में पढ़ाना शुरू कर दिया। फिर वे बार्बोर स्कॉलर के रूप में अमेरिका के मिशिगन विश्वविद्यालय गईं जहां से उन्होंने 1925 में मास्टर डिग्री हासिल की। भारत लौटकर उन्होंने फिर से डब्ल्यूसीसी में अध्यापन प्रारंभ किया। लेकिन प्रथम ओरिएंटल बार्बोर फेलो के रूप में वे एक बार पुनः मिशिगन गईं, जहां से उन्होंने 1931 में डी.एससी. की डिग्री प्राप्त की। वहां से लौटने के बाद वे त्रिवेंद्रम के महाराजास कॉलेज ऑफ साइंस में वनस्पति शास्त्र की प्रोफेसर हो गईं। वहां उन्होंने 1932-34 के दौरान अध्यापन कार्य किया।

अम्मल ने वर्ष 1934 से 1939 तक कोयंबटूर के सुगरकेन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट में अनुवांशिक विशेषज्ञ के रूप में कार्य किया। यह संस्थान छोड़कर वे इंग्लैंड चली गईं। वहां 1940-45 तक लंदन के जॉन इन्स हार्टीकल्चरल इंस्टीट्यूट में असिस्टेंट साइटोलॉजिस्ट के रूप में कार्य किया। इसके बाद 1945-51 तक उन्होंने वाइसले स्थित रॉयल हार्टीकल्चरल सोसाइटी में साइटोलॉजिस्ट के दायित्व का निर्वाह किया। वर्ष 1951 में प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने उनसे बॉटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया (बीएसआई) के पुनर्गठन की ज़िम्मेदारी उठाने को कहा। इस पर वे बीएसआई की स्पेशल ऑफिसर के रूप में भारत लौटीं। बीएसआई का पुनर्गठन करने के अलावा उन्होंने केंद्र सरकार में कई दायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह किया। इनमें इलाहाबाद में सेंट्रल बॉटेनिकल लैबोरेट्री के प्रमुख के अलावा जम्मू एवं कश्मीर स्थित रीजनल रिसर्च लैबोरेट्री में स्पेशल ड्यूटी अधिकारी जैसे दायित्व भी शामिल हैं। कुछ समय के लिए उन्होंने ट्रॉम्बे स्थित भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र में भी कार्य किया। उसके बाद नवंबर 1970 में वे मद्रास चली आईं और मद्रास विश्वविद्यालय के सेंटर फॉर एडवांस्ड

स्टडीज़ इन बॉटनी में एमेटिरस साइंटिस्ट के रूप में सेवा देने लगीं। फरवरी 1984 में अंतिम श्वास लेने तक वे मद्रास के निकट मदुरावोयल स्थित सेंटर की फील्ड लैबोरेट्री में कार्य करती रहीं।

जानकी अम्मल को वर्ष 1935 में इंडियन एकेडमी ऑफ साइंस और वर्ष 1957 में इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी का सदस्य चुना गया। मिशिगन विश्वविद्यालय ने उन्हें वर्ष 1956 में मानद एल.एल.डी. की उपाधि प्रदान की। भारत सरकार ने वर्ष 1957 में उन्हें पद्मश्री के सम्मान से नवाजा तो केंद्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने वर्ष 2000 में उनके नाम पर टैक्सोनॉमी के क्षेत्र में राष्ट्रीय अवार्ड की स्थापना की।

उनके कार्यों व उपलब्धियों की समीक्षा उनके ज़माने की परिस्थितियों व चुनौतियों के संदर्भ में ही की जा सकती है। अम्मल से मेरी पहली मुलाकात जुलाई 1950 में स्वीडन के स्टॉकहोम में आयोजित इंटरनेशनल बॉटेनिकल कांग्रेस के दौरान हुई थी। कांग्रेस में भाग लेने वाले भारतीय प्रतिनिधियों को तत्कालीन भारतीय राजदूत आर.के. नेहरू और उनकी पत्नी ने दूतावास में आमंत्रित किया था। इनमें अम्मल और मेरे अलावा एफ.आर. भरूचा, के.ए. चौधरी, पी. माहेश्वरी, वी. पुरी, टी.एस. सदाशिवन, सावित्री साहनी और जे. वेंकटेश्वरलू शामिल थे। अम्मल से मेरी दूसरी मुलाकात जनवरी 1951 में लंदन के इंडिया हाउस में उस समय हुई जब ब्रिटेन में भारत के तत्कालीन उच्चायुक्त ने प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के सम्मान में एक भोज का आयोजन किया था। उस समय अम्मल ने प्रधानमंत्री से मेरा परिचय करवाया था। वे उस दौरान वाइसले में *मैग्नोलिया* पौधे की कोशिका अनुवांशिकी पर कार्य कर रही थीं। उनके भारत लौटने के बाद उनसे विज्ञान सम्बंधी कार्यक्रमों में मेरी मुलाकात होती रही जिनमें वे पूरे उत्साह से भाग लेती थीं।

नेशनल इंस्टीट्यूट आफ साइंसेज़ ऑफ इंडिया (अब इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी) का रजत जयंति समारोह 30 दिसंबर 1960 को दिल्ली में आयोजित किया गया था। उस समारोह में अम्मल भी आई थीं। संयोग से उस साल मुझे भी फेलो चुना गया था। एकेडमी के सभी फेलो का ग्रुप फोटो खींचा गया था। यहां उल्लेखनीय है कि उस फोटोग्राफ में केवल अम्मल ही एकमात्र महिला थी। मैं जितने साल मद्रास स्थित सेंटर फॉर एडवांस्ड स्टडीज़ इन बॉटनी का प्रमुख रहा, उस दौरान संस्थान में अम्मल एमेटिरस साइंटिस्ट के रूप में कार्य करती रहीं। वे बहुत ही शांत और विनम्र थीं, लेकिन उतनी ही अधिक सक्रिय और गतिशील भी थीं। वे इतनी बड़ी हस्ती थीं, लेकिन उन्होंने खुद उसका कहीं प्रदर्शन नहीं किया। वे हमारे संस्थान का एक अभिन्न हिस्सा बन चुकी थीं।

भारत के अन्य राज्यों की तुलना में केरल में महिलाओं को कहीं अधिक स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त हैं। अम्मल जैसे पढ़े-लिखे परिवारों में तो लड़कियों को बौद्धिक कार्यों और ललित कलाओं में दक्ष होने के लिए प्रेरित किया जाता रहा है। अम्मल पेड़-पौधों के प्रति असीम अनुराग की भावना के साथ पैदा हुई होंगी। तभी तो उन्होंने अध्ययन के लिए वनस्पति शास्त्र का चयन किया और उच्च अध्ययन के लिए मद्रास गईं। मद्रास के प्रेसीडेंसी कॉलेज में शिक्षकों की बदौलत प्रकृति के प्रति उनका प्रेम परवान चढ़ा व पौधों के अध्ययन की अभिलाषा और तीव्र हुई। कैरीयर को लेकर उनके प्रयोगों से उनकी ज़िंदगी के मिशन को समझा जा सकता है। सबसे पहले उन्होंने अध्यापन को कैरीयर के रूप में चुना। फिर वे शोध कार्य की ओर प्रवृत्त हुईं। मिशिगन विश्विद्यालय में उनकी दो पारियों ने उन्हें वनस्पति विज्ञान में विशेषज्ञता हासिल करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने उस दौर में कोशिका विज्ञान को चुना जब विज्ञान मुख्य रूप से केंद्रक और गुणसूत्रों पर ही केंद्रित था।

पिछली सदी के शुरुआती दशकों में अनुवांशिकी, खासकर गेहूं व गन्ने की अनुवांशिकी पर खूब शोध कार्य हुआ है। कोयम्बटूर स्थित सुगरकेन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट में सी.ए. बार्बोर और टी.एस. वेंकटरामन ने गन्ने की संकर किस्मों के विकास पर शोध शुरू किया था। वेंकटरामन ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विख्यात गन्ने की कोयम्बटूर किस्मों (जैसे 419) विकसित की। इसकी प्रमुख विशेषता यह थी कि इसे कम पानी वाले इलाकों में भी बोया जा सकता था और यह रोग प्रतिरोधक थी। कोयम्बटूर किस्मों को सारे भारत में बोया

जाने लगा। यहां तक कि इसे विदेशों में भी हाथों-हाथ लिया गया। इसी दौर में अम्मल त्रिवेंद्रम में अध्यापन कार्य छोड़कर कोयम्बटूर के सुगरकेन ब्रीडिंग इंस्टीट्यूट आ गईं। वहां उन्होंने जीनस के बीच संकरण से कई किस्मों का विकास किया, जैसे *सेकेरम* और *ज़ीया*, *सेकेरम* और *एरिएंथस*, *सेकेरम* और *इंपरेटा* तथा *सेकेरम* और *सोर्गम*। अम्मल द्वारा *सेकेरम आफिसिनैरम* (गन्ना) की कोशिका अनुवांशिकी और गन्ने व उससे सम्बंधित बांस की प्रजातियों व जीनस के संकर बीजों पर किए गए कार्य को युंगातरकारी माना जाता है। लेकिन उनके लिए यह तो महज एक शुरुआत थी।

अपने इंग्लैंड प्रवास के दौरान (1939-1950) उन्होंने बगीचों के भिन्न-भिन्न पेड़-पौधों के गुणसूत्रों का अध्ययन किया। कई पौधों में गुणसूत्रों की संख्या व बहुगुणजता के उनके अध्ययन से प्रजातियों व किस्मों के विकास को समझने में मदद मिली है। वर्ष 1945 में सी.डी. डार्लिंग्टन के साथ मिलकर उन्होंने '*क्रोमोसोम एटलस ऑफ कल्टीवेटेड प्लांट्स*' (फसली पौधों का गुणसूत्र एटलस) लिखी थी। यह दरअसल, विभिन्न प्रजातियों पर किए गए उनके अधिकांश शोध कार्य का दस्तावेज़ है।

भारत लौटने के बाद भी उन्होंने पौधों की प्रजातियों के विकास और बहुगुणजता पर शोध कार्य जारी रखा। यहां उन्होंने कई जीनस जैसे *सोलेनम*, *डेटूरा*, *मेंथा*, *सिंबोपोगोन* और *डाइस्कोरिया* इत्यादि के अलावा विभिन्न औषधीय व अन्य पौधों पर भी उल्लेखनीय कार्य किया। इन सबका नाम देना तो यहां संभव भी नहीं है।

अम्मल मौलिक विचारक थीं। उनका अधिकांश योगदान उत्तर-पूर्वी हिमालय के ठंडे व नम मौसम में पैदा होने वाले पौधों से सम्बंधित रहा है। उनका मानना है कि पूर्वोत्तर भारत की वनस्पतियों के साथ चीन व मलाया क्षेत्र की वनस्पतियों के मिलन से उनमें प्राकृतिक रूप से संकरण की प्रक्रिया हुई है और इस प्रकार पेड़-पौधों की विविधता में और भी इजाफा हुआ।

सेवा निवृत्ति के बाद भी कहीं कोई विराम नहीं आया। वे अपने शोध कार्य में लगी रहीं, खासकर उन्होंने अपना ध्यान औषधीय पौधों व जनजातीय वनस्पति शास्त्र पर लगाया। उनके मौलिक शोध कार्य का प्रकाशन भी चलता रहा। सेंटर फॉर एडवांस्ड स्टडी की फील्ड लैबोरेट्री, जहां अम्मल ने अंतिम समय तक काम किया था, में उन्होंने पूरे उत्साह और समर्पण भाव से औषधीय पौधों का एक बगीचा तैयार किया था। हालांकि उनकी विशेषज्ञता का क्षेत्र कोशिका विज्ञान था, लेकिन उन्होंने अनुवांशिकी, जैव विकास, पादप भूगोल और जनजातीय वनस्पति शास्त्र में भी उसी दक्षता से कार्य किया।

अम्मल में शुरू से ही इतना साहस था कि वे अपना मार्ग खुद चुन सकती थीं और इतनी बहुमुखी प्रतिभा थी कि ज़रूरत पड़ने पर अपना रास्ता बदलने में भी संकोच नहीं किया। पौधों व वनस्पतियों के प्रति असीम अनुराग के चलते ही उन्होंने अपनी ज़िंदगी का लक्ष्य और मिशन तय कर लिया था। यह मिशन ही उनके लिए सर्वोपरि था और वे ज़िंदगी के अंतिम क्षणों तक इससे जुड़ी रहीं। हर पौधा, चाहे वह औषधीय हो, फसल योग्य हो या बगीचे का अथवा जंगली पौधा हो, उनकी दिलचस्पी के दायरे में रहता था। वे अपनी पहुंच की हर वनस्पति पर कार्य करने को आतुर रहती थीं। वे ब्रिटिश पौधों से भी उतनी ही परिचित थीं, जितना ऊष्णकटिबंधीय पौधों से।

अम्मल ने अपना जीवन बहुत ही सादगीपूर्ण तरीके से जीया, बिल्कुल आडम्बर रहित। अपने मिशन की खातिर वे आजीवन अविवाहित रहीं। उनकी ज़रूरतें बहुत ही सीमित थीं। संयमित व संतुलित दिनचर्या की वजह से, मुझे नहीं लगता कि, अम्मल को कभी किसी गंभीर स्वास्थ्य सम्बंधी समस्या का सामना करना पड़ा होगा। ज़िंदगी भर सक्रिय रहना ही उनकी ताकत थी। प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा के बाद अपनी आगे की पढ़ाई के लिए पैसा खुद ही जुटाया। इसके लिए उन्होंने अध्यापन व अन्य कार्य किए। स्कॉलरशिप, फेलोशिप और वैज्ञानिक कार्यों के ज़रिए उन्होंने भारत और विदेशों में रहकर अपना कैरीयर गढ़ा। विश्व युद्ध के दौर में पौधों पर अध्ययन के लिए एक अनजान देश में रहने के लिए विशेष साहस की ज़रूरत थी।

अम्मल खान-पान व पहनावे से पूरी तरह भारतीय थीं, जबकि रहन-सहन से गांधीवादी थीं। वे निस्वार्थ भाव से

काम करती थीं। उन्होंने कभी सम्मानों के लिए काम नहीं किया। जो भी सम्मान उन्हें मिले, वे अपने आप उन तक चले आए। उनके लिए कोई कोशिश नहीं की। वर्ष 1956 में मिशिगन विश्वविद्यालय ने उन्हें मानद एल.एल.डी. उपाधि प्रदान करते हुए प्रशस्ति पत्र में लिखा था, 'अम्मल की श्रमसाध्य व सटीक अवलोकन करने की क्षमता और असीम धैर्य, गंभीर व समर्पित वैज्ञानिक समुदाय के लिए अनुकरणीय उदाहरण है।' ज़रूरत पड़ने पर वे किसी अच्छे मकसद या अधिकारों के लिए संघर्ष करने से भी नहीं चूकीं। उनकी ईमानदारी और व्यावसायिक नैतिकता संदेह से परे हैं। उन्होंने महानता की नई परिभाषा गढ़ी और उसी के अनुरूप अपना जीवन जीया। इस प्रकार उनकी जीवन व कृतित्व में ऐसा बहुत कुछ है जो हमें लगातार आगे बढ़ने को प्रेरित करेगा। ***(स्रोत विशेष फीचर्स)***